पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2016 का आपराधिक प्रकीर्ण संख्या 26755

थाना कांड सं.-525 वर्ष-2009 थाना-भागलपुर परिवाद मामला जिला-भागलपुर से उद्भूत।

==========

रवीश मिश्रा उर्फ रवीश कुमार मिश्रा, पिता- स्वर्गीय बिद्यानंद मिश्रा, निवासी गाँव-कमलपुर, थाना-रैयम, जिला-दरभंगा, वर्तमान में अवर निरीक्षक, बिहार पुलिस अकादमी, पटना, बिहार के रूप में तैनात हैं।

... .याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य
2. जले प्रसाद यादव, पुत्र स्वर्गीय रामचू यादव, निवासी बोना राय लेन, बरारी, पी. एस.-बरारी, जिला-भागलपुर।

... . विपक्षी/गण

==========

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता के लिए : श्री सुभाष कुमार मिश्रा, अधिवक्ता

राज्य के लिए : श्री सुरेश प्रसाद सिंह, सहायक लोक अभियोजक

विपक्षी सं.2 के लिए : कोई नहीं।

==========

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 148, 149, 323, 325 और 448—संज्ञान आदेश को निरस्त करना—याचिकाकर्ता एक पुलिस कर्मी था, जिसने आरोपी व्यक्तियों को पकड़ने के लिए शिकायतकर्ता के घर गया, जब शिकायतकर्ता ने याचिकाकर्ता से खोज वारंट मांगा, तब बिना उसे वारंट दिखाए, उसने आरोपी व्यक्तियों को पकड़ने का प्रयास किया—याचिकाकर्ता और अन्य पुलिस कर्मियों ने शिकायतकर्ता के पुत्र पर बुरी तरह से हमला किया—उस हमले के कारण, पीड़ित को उसके पैरों में फ्रैक्चर की चोटें आईं और उसके बाद, उसे छत से जमीन पर फेंक दिया गया —जाँच गवाहों के बयान, जिसमें शिकायतकर्ता का बयान भी शामिल है, और पीड़ित की चोट रिपोर्ट इस बात को दिखाने के लिए पर्याप्त हैं कि कथित

अपराधों का प्राइमाफेसी में निष्कर्ष निकाला जा सकता है—याचिका योग्यता की कमी के कारण खारिज की गई।

1955 एसएससी ऑनलाइन SC 44; 2024 एसएससी ऑनलाइन एससी 3726 —निर्भर किया गया ।

धारा 197(2) के तहत संरक्षण प्राप्त करने के लिए यह दर्शाया जाना चाहिए कि लोक सेवक द्वारा अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन के दौरान कथित रूप से किए गए कार्यों के बीच उचित संबंध था, यदि ऐसा उचित संबंध नहीं पाया जाता है तो लोक सेवक संहिता, 1973 की धारा 197(2) के तहत संरक्षण प्राप्त करने का दावा नहीं कर सकता है।

(पैरा 6)

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

गणपूर्ति : माननीय न्यायमूर्ति श्री शैलेंद्र सिंह

सीएवी निर्णय

तिथि: **27-03-2025**

तत्काल याचिका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 (संक्षेप में दं.प्र.सं.) के तहत दायर की गई है, जिसमें 2009 के परिवाद मामला संख्या 525 के संबंध में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, भागलपुर द्वारा पारित आदेश को निरस्त करने की प्रार्थना की गई है, जिसके तहत याचिकाकर्ता एवं अन्य के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 148, 149, 323, 325 और 448 (संक्षेप में 'भ. दं. सं. ') के तहत अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

2. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सुभाष कुमार मिश्रा ने तर्क दिया है कि, परिवादी के बेटों इंदु यादव, भरत लाल यादव, नारद यादव और गुड्डू यादव के खिलाफ भ. दं. सं. की धारा 34 के साथ पठित धारा 447, 384, 385, 427 और 379 के तहत बरारी थाना कांड संख्या 103/2009 के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा की गई कानूनी कार्रवाई के कारण विपक्षी सं. 2 ने याचिकाकर्ता एवं अन्य को परेशान करने के दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से अपनी परिवाद दर्ज कराई है। अभिकथित घटना के दिन, बरारी पुलिस थाना का प्रभारी अधिकारी होने के नाते याचिकाकर्ता अन्य पुलिस अधिकारियों के साथ बरारी थाना कांड सं.103/2009 के अभियुक्त व्यक्तियों के घर पर छापा मारने के लिए रवाना हुआ और उससे पहले, सामान्य दैनिकी में एक प्रविष्टि भी की गई थी, जिसकी प्रति इस न्यायालय के समक्ष अनुपूरक शपथ-पत्र के साथ दायर की गई है और छापे के दौरान, एक वांछित अभियुक्त, मुन्ना साह को गिरफ्तार किया गया था, लेकिन परिवादी के घर पर छापेमारी नहीं की जा सकी क्योंकि परिवादी के घर का मुख्य द्वार उस समय बंद पाया गया था। परिवादी ने परिवाद केवल याचिकाकर्ता को परेशान करने और अपमानित करने के उद्देश्य से दायर की और याचिकाकर्ता द्वारा परिवादी के बेटों के खिलाफ की गई आधिकारिक कार्रवाई के जवाब में भी और यह दिखाने के लिए पर्याप्त तथ्य है कि अभिकथित घटना के समय, याचिकाकर्ता अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन कर रहा था और जांच के दौरान, नारद यादव नामक एक जांच साक्षी ने विचारण न्यायालय के समक्ष कहा कि याचिकाकर्ता ने अन्य सभी पुलिस कर्मियों के साथ वर्दी में थे जो यह भी स्पष्ट रूप से प्रकट करता है कि याचिकाकर्ता और अन्य पुलिस कर्मी अपने आधिकारिक कर्तव्य का

पालन करने के लिए परिवादी के घर गए थे क्योंकि परिवादी के बेटों को बरारी थाना कांड संख्या 103/2009 में वारंट किया गया था, इसलिए, याचिकाकर्ता का कार्य दं.प्र.सं. की धारा 197 (2) के प्रावधानों के तहत संरक्षित है, लेकिन विद्वान विचारण न्यायालय ने बिहार सरकार के सक्षम प्राधिकारी से पूर्व अनिवार्य मंजूरी लिए बिना कथित अपराधों का संज्ञान लिया और बिहार के राज्यपाल द्वारा जारी एक महत्वपूर्ण अधिसूचना को भी उपेक्षित कर दिया, जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (2) के तहत बिहार पुलिस बल के अधिकारियों को संरक्षण दिया गया है, यदि उनमें से किसी द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन करते समय, उनमें से किसी पर कोई अपराध करने का अभिकथन किया जाता है। अंत में यह निवेदन किया गया कि परिवाद में वर्णित परिवादी के बेटे भरत लाल यादव की चोटों की संख्या के संबंध में घटना का तरीका परिवादी द्वारा जांच न्यायालय में दायर उनकी चोट रिपोर्ट से पुष्टि नहीं करता है और उनके और जांच साक्षी के बीच महत्वपूर्ण विरोधाभास है जो स्वतंत्र व्यक्ति नहीं हैं और उनके बयानों के अवलोकन से, कथित अपराध याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रथम दृष्टया भी आकर्षित नहीं होते हैं और तत्काल मामला कानून की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग का एक उदाहरण है।

3. उपरोक्त तर्कों के समर्थन में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने श्री राम रेखा पांडे बनाम बिहार राज्य एवं अन्य **2016(3)** पीएलजेआर **296** में प्रतिपादित मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया है। सुसंगत अनुच्छेद सं. 14, जिस पर निर्भरता रखी गई है, तत्काल संदर्भ के लिए निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा हैः.

"14. ओम प्रकाश (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को देखते हुए, हम उल्लेख का उत्तर इस प्रकार देते हैं:.

(i) अधिसूचना, दिनांक 16.05.1980, को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 की उप-धारा (3) के तहत राज्य सरकार को प्रदत्त दायरे और/या शक्तियों से परे नहीं माना जा सकता है, जिसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ओम प्रकाश बनाम झारखंड राज्य (उपरोक्त) के मामले में लागू किया गया है और उस आधार पर पुलिस कर्मियों के खिलाफ आपराधिक अभियोजन निरस्त कर दिया गया है। हम इस तथ्य को ध्यान में रखते हैं कि दं.प्र.सं. की धारा 197 (3) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए पुलिस कर्मियों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए अधिसूचना निर्गत करने हेतु राज्य सरकार के अधिकार क्षेत्र का प्रश्न ना तो उठाया गया था और ना हीं निर्णित किया गया था।

(ii) उक्त अधिसूचना को ध्यान में रखते हुए, पुलिस अधिकारियों द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के लिए कथित रूप से किए गए अपराधों की पूर्व मंजूरी एक पूर्ववर्ती शर्त है। राम स्वरथ यादव बनाम डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिन्हा (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश का निर्णय सही विधि का निर्धारण करता है। तदनुसार, हम भिखाजी वाघाजी बनाम बारोट और अन्य (उपरोक्त) के मामले में गुजरात उच्च न्यायालय की खंड पीठ के फैसले से सहमत हैं। "

4. विपक्षी सं. 2 की ओर से कोई उपस्थित नहीं होता है।

5. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान सहायक लोक अभियोजक श्री सुरेश प्रसाद सिंह ने प्रस्तुत किया कि कथित अपराधों का संज्ञान लेते हुए आक्षेपित आदेश सही ढंग से पारित किया गया है और इस याचिका में कोई योग्यता नहीं है।

6. दोनों पक्षों को सुना और आक्षेपित आदेश और संबंधित तथ्यों का अध्ययन किया। दं.प्र.सं. की धारा 197 (2) के तहत सुरक्षा प्राप्त करने के लिए, यह दिखाया जाना चाहिए कि एक लोक सेवक द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के साथ कथित रूप से किए गए कार्यों के बीच उचित संबंध था, यदि ऐसा उचित संबंध नहीं पाया जाता है तो लोक

सेवक दं.प्र.सं. की धारा 197 (2) के तहत सुरक्षा प्राप्त करने का दावा नहीं कर सकता है। तत्काल मामले में, अभिकथनों के अनुसार, याचिकाकर्ता, जो तब बरारी पुलिस थाना का थाना प्रभारी था, 23 और 24 मार्च के बीच रात्रि को लगभग 1 बजे अपराह्न परिवादी के घर गया और सबसे पहले परिवादी के घर को घेर लिया और उसके बाद परिवादी के घर का दरवाजा खटखटाया, फिर परिवादी ने याचिकाकर्ता और अन्य पुलिस अधिकारियों से तलाशी अधिपत्र मांगा, लेकिन याचिकाकर्ता, सहित उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा दूर धकेल दिया। इसके बाद परिवादी के बेटे पर अभियुक्त द्वारा हमला किया गया और उस हमले से बचने के लिए वह छत पर चढ़ गया, लेकिन फिर भी याचिकाकर्ता सहित पुलिस अधिकारी ने उसका पीछा किया और उसे पकड़ लिया। आगे के अभिकथनों के अनुसार, याचिकाकर्ता सहित अभियुक्त व्यक्तियों ने परिवादी के बेटे भरत लाल यादव पर बुरी तरह से हमला किया, जहां उसे अभियुक्त व्यक्तियों ने पकड़ लिया था, उस हमले के कारण पीड़ित के पैरों में फ्रैक्चर हो गया और उसके बाद उसे छत से जमीन पर फेंक दिया गया। इन अभिकथित कृत्यों के संबंध में, सी.डब्ल्यू.-1, विनय यादव, जिसे एक स्वतंत्र साक्षी कहा जाता है, का बयान सुसंगत एवं समर्थन करना वाला है और अन्य जांच गवाहों ने भी उक्त अभिकथनों का समर्थन किया। यद्यपि याचिकाकर्ता द्वारा लिए गए बचाव के अनुसार, घायलों सहित परिवादी के बेटे वर्तमान मामले की कथित घटना के समय बरारी थाना कांड संख्या 103/2009 में अभियुक्त थे और याचिकाकर्ता ने सामान्य दैनिकी में प्रासंगिक प्रविष्टि करने के बाद उक्त बरारी थाना मामले में अभियुक्त व्यक्तियों को पकड़ने के लिए आगे बढ़े, लेकिन जिस तरह से पुलिस दल देर रात परिवादी के घर में आया और उसके बाद, वे बलपूर्वक

घर में प्रवेश कर गए और परिवादी के बेटे भरत लाल यादव पर हमला किया, जिससे उसे अस्थिभंग क्षति हुई, आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन का कार्य क्षेत्र नहीं माना जा सकता है और याचिकाकर्ता और अन्य पुलिस अधिकारियों द्वारा अभिकथित रूप से किए गए कार्यों और उनके आधिकारिक कर्तव्य के बीच कोई उचित संबंध नहीं है और इस संबंध में, **माताजोग डोबे बनाम एच. सी. भारी, नंद राम अग्रवाल बनाम एच. सी. भारी और अन्य** के अनुरूप**, 1955 में एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 44** में प्रतिपादित के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा निर्धारित सिद्धांत महत्वपूर्ण है**,** जिसका प्रासंगिक अनुच्छेद संख्या 17 से 19 को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा हैः**.**

> *"17. संहिता की धारा 197 में आने वाले सुसंगत शब्दों के दायरे और अर्थ का पता लगाने के लिए निर्णित मामलों में थोड़े भिन्न परीक्षण निर्धारित किए गए हैं; "कोई भी अपराध जो उसके द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के लिए किया गया था। "लेकिन अंतर केवल भाषा में है और सार में नहीं। कथित अपराध का कुछ लेना-देना होना चाहिए, या आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के साथ किसी तरह से संबंधित होना चाहिए। धारा 197 के तहत मंजूरी का कोई प्रश्न नहीं उठ सकता है, जब तक कि परिवाद किया गया कार्य एक अपराध न हो; यह निर्धारित करने का एकमात्र बिंदु यह है कि क्या यह आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में किया गया था। अधिनियम और आधिकारिक कर्तव्य के बीच एक उचित संबंध होना चाहिए। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि अधिनियम कर्तव्य के निर्वहन के लिए सख्ती से आवश्यक से अधिक है, क्योंकि यह प्रश्न केवल बाद के चरण में उत्पन्न होगा जब परीक्षण गुण-दोष पर आगे बढ़ेगा। हमें यह पता लगाना चाहिए कि क्या अधिनियम और आधिकारिक कर्तव्य इतने परस्पर संबंधित हैं कि कोई यथोचित रूप से यह मान सकता है कि यह आधिकारिक कर्तव्य के प्रदर्शन में अभियुक्त द्वारा किया गया था, हालांकि संभवतः स्थिति की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं की अधिकता थी।*
>
> *18. इस न्यायालय के दो मामले हैं जिनका संदर्भ यहां दिया जा सकता है। श्रीकान्तिः रामय्या मुनिपल्ली बनाम द स्टेट ऑफ बॉम्बे [(1955) 1 एस.सी.आर.1177,1186] में, जे. बोस इस प्रकार टिप्पणी करते हैंः"अब यह स्पष्ट है*

कि यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 को बहुत संकीर्ण रूप से व्याख्या किया जाता है,तो इसे कभी भी लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि निश्चित रूप से, अपराध करना किसी अधिकारी के कर्तव्य का हिस्सा नहीं है और कभी भी नहीं हो सकता है। लेकिन यह कर्तव्य नहीं है कि हम अधिनियम की इतनी जांच करें, क्योंकि एक आधिकारिक कार्य आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के साथ-साथ इसकी अवहेलना में भी किया जा सकता है। इस धारा के पास विषय-वस्तु है और इसकी भाषा को अर्थ दिया जाना चाहिए। पिछली मंजूरी का सवाल भी अमरीक सिंह बनाम पेप्सू राज्य [(1955) 1 एस. सी. आर. 1302,1307,1308] में उठा। इस सारांश के साथ प्राधिकारियों की काफी लंबी चर्चा निम्नानुसार की जाती है:"यदि परिवाद किए गए कार्य कार्यालय से जुड़े कर्तव्यों से इतने अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं कि उनसे अविभाज्य हैं, तो धारा 197 (1) के तहत मंजूरी आवश्यक होगी; लेकिन यदि उनके और उन कर्तव्यों के प्रदर्शन के बीच कोई आवश्यक संबंध नहीं था, तो केवल कृत्यों के लिए अवसर या अवसर प्रदान करने वाला आधिकारिक दर्जा, तो किसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं होगी। "

19. पूर्ववर्ती चर्चा का परिणाम यह है: अधिनियम और आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के बीच एक उचित संबंध होना चाहिए; अधिनियम को कर्तव्य के साथ ऐसा संबंध रखना चाहिए कि अभियुक्त एक उचित, लेकिन एक ढोंग या काल्पनिक दावा नहीं कर सके, कि उसने इसे अपने कर्तव्य के प्रदर्शन के दौरान किया था। "

उपरोक्त सिद्धांत का माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कई मामलों में पालन किया गया है और हाल ही में **ओम प्रकाश यादव बनाम निरंजन कुमार उपाध्याय, 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस. सी. 3726,** में प्रतिपादित मामले में पारित निर्णय में भी इसका पालन किया गया है।

परिवादी के गंभीर शपथ (एस.ए.) पर बयान और पीड़ित के क्षति प्रतिवेदन सहित जांच साक्षियों के बयान अभिकथित अपराधों के प्रथम दृष्टया अपराध के होने को दिखाने के लिए पर्याप्त हैं। इसलिए, इन पहलुओं पर विचार करते हुए, याचिकाकर्ता दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (2) के तहत सुरक्षा प्राप्त करने का हकदार नहीं है क्योंकि अभिकथित कृत्यों को प्रासंगिक समय पर याचिकाकर्ता के आधिकारिक दायरे में आना नहीं माना

जा सकता है। परिणामस्वरुप, वर्तमान याचिका योग्यता के अभाव के कारण खारिज की जाती है।

(शैलेंद्र सिंह, न्यायमूर्ति)

अन्नु/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।